ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 197-199
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

बुन्देली लोक काव्य में सामाजिक स्थिति

सुनील कुमार यादव
अतर्रा पी0जी0 कालेज, अतर्रा, बाँदा, (उ0प्र0), भारत

Received- 08.05.2019, Revised- 13.05.2019, Accepted - 17.05.2019 E-mail: -aaryvart2013@gmail.com

सारांश : *.लोक काव्य में समसामयिक स्थिति परिलक्षित होती है। व्यक्ति जो देखता है या अनुभव करता है,वही वर्णन करता है। परिवर्तित होती परम्परायें,मानवमूल्य आदि का आभास लोककाव्य से होता है। छंदशास्त्र में लोकछंदों का उल्लेख नहीं मिलता है लोककाव्य को दृष्टिगत रखते हुये काव्य के लक्षण निश्चित किये जाते है, फिर परवर्ती लोक कवि उसी आधार पर लोक काव्य रचना करते हैं। समाज की कुरीतियॉं, व्यसन, धनाभाव का वर्णन लोककाव्य में किया जाता है। यही लोककाव्य संगीत के क्षेत्र में अपनी लोक–लय के कारण अपनी अलग पहचान बनाता है। लोक संगीत का पृथक अस्तित्व व वर्चस्व है लोक संगीत मुख्यतः दो प्रकार का होता है –*

कुंजीभूत शब्द– लोक काव्य, परिलक्षित, मानवमूल्य, छंदशास्त्र, कुरीतियॉं, व्यसन, धनाभाव, अस्तित्व, वर्चस्व ।

1. एक तो सहज लोकसंगीत, जो सोहर या फाग अर्थात् संस्कारपरक और उत्सवपरक लोकगीतों के साथ लोक प्रचलित था।
2. फड़ संगीत जो लोकमंचों, समाजों और अखाड़ों में चलता था, जिसमें प्रतिद्वंद्विता भी होती थी।

जब लोक की पीड़ा मधुरकंठ से निसृत होती थी तो श्रोताओं के नेत्र सजल हो उठते थे। लोक काव्य में अपनी बोली के शब्द रहने से श्रोता लोककवि की सम्प्रेषणीयता को सहज ही आत्मसात कर लेता है और 2–3 बार सुनने पर लोक काव्य को सहज में याद भी कर लेता है। जब लोक काव्य प्रसिद्ध हो जाता है तो अन्य भाषा भाषी उसमें अपनी भाषा खोजने लगते है, तब अन्य क्षेत्रों के विद्वान उस लोक काव्य को अपना होने का दावा करते है। विद्यापति ने मैथिली में लोक काव्य की रचनायें की। उनकी प्रसिद्धि के कारण ही वे मैथिल कोकिल कहलाये। बंगभाषा वालों के साथ साथ ग्रियर्सन ने भी मागधी से उत्पन्न होने के कारण मैथिली हो हिन्दी से अलग माना है। जिसमें बंगला भाषी लोग मैथिली को अपनी ओर खीचतें है। वस्तुतः भाषा हो या बोली उसे समझने का सीमांकन होता है –

कोई भाषा कितनी दूर तक समझी जाती है, इसका विचार भी तो आवश्यक होता है। किसी भाषा का समझा जाना अधिकतर उसकी शब्दावली पर अवलम्बित होता है। यदि ऐसा न होता तो उर्दू और हिन्दी का एक ही साहित्य माना जाता।

बुन्देली का क्षेत्र बुन्देलखण्ड ही है। यहाँ से श्रमिक वर्ग महानगरों में जीविका की खोज में जाता है तो उनकी बोली सुनकर उस क्षेत्र के लोग भी समझने लगते हैं और उस क्षेत्र भाषा, बोली का बुन्देलखण्ड के लोग समझने के कारण प्रयोग में भी लाते है। बुन्देलखण्ड में किसान और श्रमिक सामान्यतः अभावग्रस्त रहता है शिक्षा तो दूर की बात है, उसे परिवार का भरण–पोषण ही कठिन होता है तब महिला अपने पति को जीविका चलाने के लिये प्रेरित करती ही रहती है –

कारे अक्षर भैंस बराबर धरी नौकरी है नइयॉं।
ऐसोइ ढला चला जो रै है बेचत फिरो लकरियाँ।।

कृषक और श्रमिक के बलपर अन्य लोग धनाढ्य होते जा रहे हैं। कृषि का अवमूल्यन व कम मजदूरी से निम्न वर्ग हीनभावना से ग्रसित होते हुये अत्याचार शोषण सहता है और संगठन तो दूर की बात है एक भाई ही अपने भाई की सहायता नहीं कर पाता। एक कृषक की पीड़ा सन्तोष सिंह बुन्देला की रचना में दृष्टव्य है –

तिली–कपास करैं पैदा हम,तुमने मील बना लए।
जब हम उन्ना लैबे आए,दो के बीस गिना लए।।
बराई होय हमारे खेत और तुम सुगर मील कर लेत।

कृषक कहता है कि तिली,कपास की पैदावार है जिससे धनाढ्य लोगों ने कपड़ा मील बनवा ली और जब कृषक कपड़ा लेने जाता है तो उसे दो रू की कपड़ा बीस रूपयें में मिलता है। बराई अर्थात् गन्ने की खेती वह करता है और व्यापारी शक्कर की मील लगवा लेता है। श्रमिक वर्ग के दुखों का कारण व्यसन भी है दिन भर की थकान दूर करने के लिये वे व्यसन का सहारा लेते है। कम आय होने पर व्यसन का अभ्यस्त होने पर पारिवारिक क्लेश होता है साथ ही पत्नी, बच्चे भोजन को तरस जाते हैं। लोक कवि ने इस दशा में व्यसन से दूर रहने के लिये चेताया है। लोक कवि अपना लोक धर्म का निर्वाह करते हुए प्रयास करता है कि व्यक्ति व्यसन से दूर रहे।

बाबूलाल जैन 'सलिल' लिखते हैं–

बेटा अपनी मनमानी कर ख नफा नुकसान तनक नई तक ख। तमाखू शराब सबई कुछ खा पी ख। मताई बाप खों जो न सुहाख। लरका खों मिल दोनों समझा ख।

व्यसन का शाब्दिक अर्थ है आपत्ति, विशेष भोजन। व्यवहारिक रूप में व्यसन से आशय बुरी आदत से है। व्यसनी व्यक्ति किसी के समझाने से नहीं मानता जब उसे प्रत्यक्ष रूप से भारी हानि होती है तब उसे अनुभव होता है कि यह प्रवृत्ति ठीक नहीं है।

मशीन का युग आने से भी श्रमिकों को जीविका के साधन कम मिल सके है। लोक कवि कल(मशीन) के उपयोग करने के लियें भी प्रेरित करता है ताकि कम समय में अधिक कार्य हो सके। कृषि के लिए कई यंत्र आ चुके हैं।

श्रमिक वर्ग की उपादेयता में भी प्रश्नचिन्ह लगा है। तब लोक कवि रामसहाय कारीगर लिखते हैं –

खेती होत टैक्टरन थल में –जोते धरती।
देखौ कलें कपास उठावें, कपड़ा मीलन से बुन आवें
बोझा होय हजारन मन कौं, किरन पकर चढ़वावै।
कल से चक्की आटा पीसत, टक टक करत सुनावै।

लोक कवि यह इंगित कर रहा है कि हजारों मन के बोझा ढोने में बहुत श्रमिकों का उपयोग होता था। अब क्रेन द्वारा बोझा उठा लिया जाता है । बैल का उपयोग अब खेती में नहीं रह गया। ट्रैक्टर में कल्टीवेटर लगाकर खेत की जुताई हो रही है। अतीत में प्रातःकाल स्त्रियॉ लोक गीत गाते हुये घर में ही चकिया में अनाज पीसती थीं जिससे उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता था, अब अनाज, पीसने की मशीन आने से स्त्रियों का श्रम का अभ्यास छूट जाने से महिलाओं में मोटापा, मधुमेह आदि बीमारियॉ होने लगी।

पहले व्यक्ति शाक का अधिक सेवन करता था। हरी सब्जियों के खाने से स्वास्थ्य अच्छा रहता था, जिससे पकवान खाने पर भी विपरीत असर नहीं होता था। बुन्देलखण्ड में पान की खेती के साथ भाजी भी लगाई जाती है । बरेजों में बथुआ की भाजी होती है इसे खाने से भूख लगती है शाक व फलों के अपभ्रंश नाम इन पंक्तियों में दृष्टव्य है –

भुजिय,ककरी और ककोरा, बथुआ,नये सलगम,मूरा
कटहर सुनो कुमेड़ो मूरा अब मिर्चें निबुआ आये जू।

यद्यपि सरकार ने छुआछूत विषयक कानून बनाये है। जातिसूचक शब्दों का प्रयोग करना अपराध है। अस्पृश्यता सामाजिक अभिशाप है, ऐसा वक्तव्य मंचों पर दिया जाता है, आरक्षण भी है किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी छुआछूत है। जातिगत पंचायतों में कठोर निर्णय दिये जाते हैं जिसकी कही अपील भी नहीं होती है, अन्तर्राजातीय विवाह होने पर भी सामाजिक बहिष्कार किया जाता है वर्ग विशेष की जल व्यवस्था अलग होती है,पीड़ित व्यक्ति का ह्रदय कुंठित हो जाता है। लोक कवि तब लिखता है –

अब सब मिलकें विगुल बजाओ,उठो अँगारी आओ।
पढ़ौ लिखौ लरकन पढ़ाव सब,शिक्षा–दीप जलाओ।।
छुआछूत जो तुमसे मानें,मानन दो गम खाओ।
मनुस समान रचे विधना ने,मन की शक्ति बढ़ाओ।
दयाराम मानुस तन पाके,जो चाहो बन जाओ।।

लोक कवि का आशय है कि धैर्यपूर्वक समाज में रहते हुये शिक्षा का महत्व देते हुये स्वयं इतनी प्रगति करो कि समाज जाति को नहीं, शिक्षा को स्थान दे। समाज में सभी मनुष्य, ईश्वर ने समान भेजे है।

समाज निःसन्तान महिला को ही दोषी मानते हुये उस पर कटाक्ष करने हुये निन्दा करता है,वन्ध्या स्त्री को पारिवारिक प्रताड़ना मिलती है। पुरूष में शारीरिक कमी होने पर भी उसे कोई दोष नहीं देता है और उसका दूसरा विवाह करवा दिया जाता है। बाँझ स्त्री अंधविश्वास के चक्र में फँसते हुये ठगी जाती है, मांगलिक कार्यक्रमों में लोग उससे दूरी बना कर रखते हैं। बाँझ स्त्री को परिवार, समाज में घृणा, उपेक्षा ही मिलती है तब स्त्री संसार में स्वयं को अकेला अनुभव करती है,जिसने उसके साथ अग्नि की सात परिक्रमा की है उससे ही स्त्री को घृणा मिलती है तब स्त्री समझ लेती है कि उसका कोई नहीं है सारे सम्बन्ध नाम के ही रह गये है तब वह देवी–देवताओं से प्रार्थना करती है–

मात पिता मोरे नइयाँ कोऊ,नइयाँ माई हमारे हो।
सास ससुर मोरे नइयाँ कोऊ,नइयाँ देवर हमारे हो।।
पति हमारे मइया घर से निकारे, बाँझ धना को का करें हो।
मोरी दुखनी को कोऊ न सहारो, शरण तुम्हारे आई हो।

क्या विडम्बना है जब हाड़ माँस के पतिदेव से उपेक्षा मिलती है तब स्त्री पत्थर के देवता के समक्ष अपनी व्यथा कहती है। समाज में नारी शैशवकाल से ही उपेक्षित रहती है। सरकार 'बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओ' का नारा देती है और बेटी के लिये बहुत योजनायें भी बनाती है किन्तु अभी भी मानव के संकुचित सोच में परिवर्तन नहीं हुआ है। लोग बड़े गर्व से कहते है कि हमारे इतने लड़के है जिसे सुन कर सम्बन्धी,मित्रगण कहते है तुम तो बड़े सुखी हो,हमारे यहॉ कन्या है चिकित्सालय में जब नारी बालिका को जन्म देती है तो उसके सम्बन्धी जन दुखी हो जाते है,सास–ससुर,पति उपेक्षा करते हुये प्रसूता की समुचित देखभाल भी नहीं करते है। परिवार में शोक का वातावरण छा जाता है। सहर्ष कोई उत्सव नहीं किया जाता है। नारी की वेदना दृष्टव्य है– जब राहू कुखियाँ उपजी लड़लड़ी,

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

भई है बज्जुर की हो रात। घर इंदियारों बाहर इंदियारों मानिक धरे हैं सिराव सासो ननदिया मुख हू न बोले सैयाँ हमाये बखरी न आये जे दुख भये है सरीर।।

आशय यह है कि लोगों की यह सोच हो गयी है कि बालिका उत्पन्न करने वाली नारी का ही दोष है। बुन्देली लोकगीतों में समाज दिखाई देता है। मानव की प्रवृत्ति, पारिवारिक स्थिति, सामाजिक कुरीतियॉ आदि को दृष्टिगत रखते हुये लोक काव्य लिखा जाता है। समय के साक्षी ये लोकगीत बदलते परिवेश के भी नियामक है। वैवाहिक कार्यक्रमों में वर–वधू में लोक राम–सीता के दर्शन करता है और राम कथा के पात्रों को प्रतीक मानते हुये वर्तमान परिवेश का वर्णन करता है। समाज को दशा बतलाने वाले और दिशा देने वाले ये लोक गीत लोकमुख से अगली पीढ़ी को मिलते हैं और इस प्रकार कई पीढ़ियों तक गीत बने रहते हैं। इतना अवश्य है कि कंठस्थीकरण में कोई त्रुटि होने पर शब्द परिवर्तित हो जाते हैं जिससे की लोकगीत की मूल आत्मा को समझने में कठिनाई होती है। शैशवकाल से ही लोकगीतों की गायन प्रतियोगिता कराई जाती है। पाठ्य में भी बुन्देली काव्य को स्थान दे तो बचपन से ही बालक–बालिका अपनी संस्कृति–साहित्य से परिचति हो सकते हैं। अल्पावधि में ही विवाह सम्पन्न होने की परम्परा ने लोक साहित्य को बहुत हानि पहुँचाई है। भविष्य में लोक साहित्य की पहचान बनाये रखने की दिशा में वर्तमान में लोककाव्य को संरक्षित करना ही होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास–नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ 59.
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ 58.
3. बुन्देली माटी–डॉ. इन्द्रपालसिंह परिहार 'अभय' पृष्ठ 51.
4. बुन्देली काव्य संग्रह–सम्पादकद्वय–डॉ.मनुजी श्रीवास्तव व डॉ. सुरेन्द्र सक्सेना पृष्ठ 58.
5. बुन्देली का झरना–बाबूलाल जैन'सलिल' पृष्ठ 51.
6. नई टकसार–सम्पादक डॉ0 दयाराम बेचैन पृष्ठ 67.
7. बुन्देलखण्ड दर्शन–मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' पृष्ठ 426.
8. बुन्देली चौकड़िया सागर–डॉ.दयाराम 'बेचैन' पृष्ठ 190.
9. बुन्देली लोक संगीत संजीवनी–रामेश्वर दयाल चौरसिया पृष्ठ 456.
10. बुन्देली लोकगीतों में साहित्य संस्कृति और इतिहास–जानकी शरण वर्मा पृष्ठ 41.

*****